श्री रविंदर कुमार शर्मा

बनाम

असम राज्य व अन्य।

सितंबर 14, 1999

[एम. जगन्नाथ राव और एम. श्रीनिवासन जे.]

टॉर्ट्स-दुर्भावनापूर्ण अभियोजन-अपीलार्थी को उसकी राइस मिल में तलाशी के बाद दो पुलिस अधिकारियों द्वारा गिरफ्तार किया गया-अधिकारियों द्वारा बेचे गए चावल और धान जब्त किए गए आपराधिक अभियोजन में अपीलार्थी को आरोपमुक्त किया गया-अपीलार्थी द्वारा मुकदमा इस आधार पर कि गिरफ्तारी का कोई उचित या संभावित कारण नहीं था-धन और गैर-आर्थिक नुकसान के लिए-निचली अदालत द्वारा खारिज-उच्च न्यायालय ने आंशिक रूप से अपील की अनुमति दी, आर्थिक नुकसान के संबंध में-मुकदमे का फैसला उचित और संभावित कारण और द्वेष की कमी के निष्कर्ष पर-गैर-आर्थिक नुकसान के दावे को खारिज कर दिया-असम नियंत्रण आदेश के आधार पर गिरफ्तारी- उत्तरदाताओं ने सरकारी निर्देशों के तहत काम किया-अभिनिर्धारित, उच्च न्यायालय का निष्कर्ष उचित और संभावित कारण का अभाव था गलत है।

सिविल प्रक्रिया संहिता, 1908-जैसा कि 1976 में संशोधित किया गया-आदेश XLI नियम 22-दुर्भावनापूर्ण अभियोजन के लिए अपीलार्थी द्वारा मुकदमा-आर्थिक और गैर-आर्थिक नुकसान के लिए विचारण न्यायालय द्वारा खारिज-आर्थिक क्षति के संबंध में उच्च न्यायालय द्वारा आंशिक रूप से अपील डिक्री-गैर-आर्थिक क्षति के लिए अपीलकर्ता द्वारा अपील-प्रत्यर्थियों द्वारा कोई अपील या प्रति-आपत्तियां नहीं-क्या उच्च न्यायालय द्वारा एक प्रतिकूल निष्कर्ष पर प्रतिवादियों द्वारा मुकदमे की बर्खास्तगी को बनाए रखने के लिए भरोसा किया जा सकता है-अभिनिर्धारित-हाँ-प्रति-आपत्ति दायर करना उत्तरदाता के लिए वैकल्पिक है और अनिवार्य नहीं है।

धारा 11-अपीलार्थी द्वारा मुकदमा-उच्च न्यायालय द्वारा आंशिक रूप से डिक्री किया गया-प्रत्यर्थी द्वारा कोई अपील या प्रति आपत्ति दायर नहीं-अपीलार्थी द्वारा अपील आंशिक डिक्री के संबंध में निष्कर्षों पर प्रतिवादी द्वारा आंशिक रूप से मुकदमे की बर्खास्तगी को बनाए रखने के लिए भरोसा किया जा सकता है-अभिनिर्धारित, कोई पूर्वी न्याय नहीं है।

साक्ष्य अधिनियम 1872-धारा 81-समाचार पत्र में वक्तव्य-वास्तविकता के अनुमान को उसमें बताए गए तथ्यों के प्रमाण के रूप में नहीं माना जा सकता है-कथन केवल सुनी-सुनाई बातें हैं।

अपीलार्थी ने दावा किया कि दि. 1.10.77 को उत्तरदाता 2 और 3 राज्य पुलिस अधिकारीगण उसकी मिल में घुस गए और असम खाद्यान्न (अनुज्ञप्ति और नियंत्रण) आदेश 1961 का उल्लंघन करने के लिए धान और चावल जब्त कर लिए। अपीलार्थी को गिरफ्तार कर रिहा कर दिया गया। उत्तरदाताओं ने धान और चावल बेच दिया और राशि प्राप्त की। अपीलार्थी को दाण्डिक न्यायालय द्वारा इस आधार पर उन्मोचित कर दिया गया था कि अपीलार्थी की तलाशी, जब्ती और गिरफ्तारी के समय 1961 का असम नियंत्रण आदेश लागू नहीं था और यह कि 30.9.97 पर समाप्त हो गया।

अपीलार्थी ने मुकदमे में दिखाई गई राशि अनुसूची ए से सी की प्रारंभिक और गैर-प्रारंभिक नुकसान के रूप में वसूली के लिए राज्य और दो पुलिस अधिकारियों के खिलाफ दुर्भावनापूर्ण अभियोजन के लिए हर्जाने के लिए मुकदमा दायर किया।

अपीलार्थी द्वारा दायर दीवानी मुकदमे में उन्होंने तर्क दिया कि तलाशी, जब्ती और गिरफ्तारी अनधिकृत थी क्योंकि केंद्र सरकार ने विभिन्न प्रतिबंधों को हटा दिया था और उस संबंध में विचारों को दिनांक 29.9.77 को अख्बारों में प्रकाशित किया गया था, यह कि अपीलार्थी द्वारा उत्तरदाता 2 और 3 के नियंत्रण आदेश की समाप्ति के बारे में सूचित किया था, परन्तु प्रतिवादी 2 और 3 ने ध्यान नहीं दिया और अपीलार्थी को गिरफ्तार कर लिया क्योंकि उन्होंने चावल के एक थैले की मांग की थी,

का अनुपालन नहीं किया गया था, यह कि प्रतिवादी 2 और 3 ने दुर्भावनापूर्ण व्यवहार किया यह कि अपीलार्थी और धान/चावल के मालिकों के पास धान की मिलिंग के लिए परमिट थे और उन्हें अधिकारियों के सामने पेश किया गया था, यह कि माल की बिक्री जल्दबाजी में किया गया और इन तथ्यों से पता चला कि अभियोजन के लिए कोई उचित या संभावित कारण नहीं था।

उत्तरदाताओं ने तर्क दिया कि दि. 1.10.77 पर केंद्र का कोई आदेश सरकार को राजपत्र में प्रकाशित नहीं किया गया था, यह कि अपीलार्थी को भी उक्त आदेश के बारे में कोई जानकारी नहीं थी क्योंकि उसके द्वारा दायर जमानत याचिका में भी ऐसा कोई तथ्य नहीं कहा गया था कि राज्य ने 30.9.97 पर निर्देश जारी किए थे कि असम नियंत्रण आदेश का प्रवर्तन लागू था और सरकारी निर्देशों के अनुसरण में कार्रवाई सद्भावनापूर्ण है। प्रतिवादियों ने धान की एक बोरी की मांग से इनकार किया और यह भी तर्क दिया कि उन्हें कोई परमिट नहीं दिखाया गया था और इसलिए गिरफ्तारी और अभियोजन के लिए उचित और संभावित कारण था।

ट्रायल कोर्ट ने मुकदमे को खारिज कर दिया और कहा कि अभियोजन पक्ष के लिए उचित और संभावित कारण था, कि प्रतिवादियों की कार्रवाई राज्य सरकार के निर्देश पर आधारित थी कि असम नियंत्रण

आदेश लागू किया जाना चाहिए कि चावल के थैले की मांग का मामला झूंठा था और पूरा दावा काल्पनिक था।

अपीलार्थी द्वारा अपील पर, उच्च न्यायालय ने एक डिक्री मुकदमे की अनुसूची बी और सी में आर्थिक नुकसान के लिए प्रदान की, लेकिन गैर आर्थिक नुकसान देने से इनकार इस आधार पर किया कि, अपीलार्थी ने अनुसूची ए में हर्जाने के संबंध में कोई सबूत पेश नहीं किया। उच्च न्यायालय ने माना कि प्रतिवादी 2 और 3 ने अपने अधिकार का उल्लंघन किया क्योंकि असम नियंत्रण आदेश दिनांक 01.10.77 काे लागू नहीं था, कि अधिकारियों ने अपनी शक्तियों का दुरुपयोग किया, कि अधिकारियों के सामने अभियोजन शुरू करने के लिए उचित और संभावित कारण रखने के लिए कोई सामग्री नहीं थी। उच्च न्यायालय ने आगे कहा कि चूंकि लिखित कथन केवल प्रतिवादी संख्या 1 द्वारा दायर किया गया था, इसलिए यह माना जाना चाहिए कि चावल के एक थैले की मांग के आरोप से इनकार नहीं किया गया था, कि अपीलकर्ता और धान के मालिक ने अपने परमिट दिखाए लेकिन उस पर ध्यान नहीं दिया गया और प्रतिवादी संख्या 2 और 3 द्वारा अपीलार्थी के साथ किया गया व्यवहार सबसे "अत्याचारी और दुर्भावनापूर्ण" था।

गैर-आर्थिक हर्जाने के संबंध में अपीलार्थी द्वारा इस न्यायालय में अपील में, प्रत्यर्थी ने तर्क दिया कि अभियोजन के संबंध में उच्च

न्यायालय का निष्कर्ष उचित और संभावित कारण के बिना या कि यह दुर्भावनापूर्ण आदि था, सही नहीं था और इसलिए गैर-आर्थिक हर्जाने के लिए कोई डिक्री पारित नहीं की जा सकती है। अपीलार्थी ने तर्क दिया कि आर्थिक नुकसान के लिए डिक्री एक ही निष्कर्ष पर आधारित थी और न तो आर्थिक नुकसान के लिए डिक्री, न ही उचित और संभावित कारण, द्वेष आदि के अभाव के बारे में प्रतिकूल निष्कर्ष को प्रतिवादी द्वारा चुनौती दी गई थी और इसलिए उक्त निष्कर्षों पर उत्तरदाताओं द्वारा 1976 में संशोधित आदेश 41 नियम 22 के तहत हमला नहीं किया जा सकता था, कि निष्कर्ष अंतिम हो गए हैं और पूर्वी न्याय के रूप में संचालित किए गए हैं और वैकल्पिक रूप से कि निष्कर्ष उच्च न्यायालय द्वारा बताए गए पर्याप्त सबूतों पर आधारित थे और उच्च न्यायालय को 'ए' अनुसूची में गैर-आर्थिक नुकसान के लिए भी एक डिक्री पारित करनी चाहिए थी।

अपील को खारिज करते हुए, अदालत ने अभिनिर्धारित किया

1. उत्तरदाता-प्रतिवादी-एक अपील में प्रतिवादी आपत्तियां दायर किए बिना निचली अदालत द्वारा उसके खिलाफ मुकदमें को खारिज किए जाने की हद तक डिक्री को बनाए रखने के उद्देश्य से ऐसे प्रतिकूल निष्कर्ष पर हमला कर सकता है, जिस पर प्रतिवादी के खिलाफ आंशिक रूप से एक डिक्री पारित की गई है। 1916 के संशोधन के बाद प्रति-आपत्ति दाखिल करना विशुद्ध रूप से वैकल्पिक है और अनिवार्य नहीं है। [350 - जी]

वेंकट राव व अन्य बनाम सत्यनारायण मूर्ति और अन्य, ए.आई.आर.(1943) मद्रास 698–आई.एल.आर. (1944) मद्रास 147 और श्री चंद्र प्रभुजी जैन मंदिर और अन्य बनाम हरि कृष्ण और अन्य, [1973] 2 एससीसी 665 = ए.आई.आर.(1973) एस.सी. 2565, को निर्दिष्ट।

तेज कुमार बनाम पुरुषोत्तम ए. आई. आर. (1981) एम. पी. 55 और निशाम्बु जाना बनाम सोवा गुहा, (1982) 89 सी. डब्ल्यू. एन. 685, अनुमोदित।

2. उत्तरदाताओं को यह तर्क देने का अधिकार है कि उच्च न्यायालय का उचित और संभावित कारण या द्वेष के अभाव के संबंध में निष्कर्ष (जिस पर बी और सी अनुसूची में आर्थिक नुकसान के लिए डिक्री आधारित थी) पर उत्तरदाताओं द्वारा ए अनुसूची के अनुसार गैर-आर्थिक नुकसान के लिए डिक्री पारित करने से इनकार करने वाले उच्च न्यायालय के डिक्री को बनाए रखने के उद्देश्य से हमला किया जा सकता है। प्रतिकूल निष्कर्ष के खिलाफ प्रति-आपत्तियां दर्ज करना अनिवार्य नहीं था। कोई पूर्व न्याय नहीं है। [351-बी]

3. धारा 81 साक्ष्य अधिनियम के तहत समाचार पत्र की रिपोर्टों से संलग्न वास्तविकता की उपधारणा उसमें बताए गए तथ्यों के प्रमाण के रूप

में नहीं मानी जा सकती है। समाचार पत्रों में तथ्य के बयान केवल सुनी-सुनाई बातें हैं। [352 - सी]

लक्ष्मी राज सेट्टी बनाम टी. एन. राज्य, [1988] 3 एस.सी.सी. 819, संदर्भित।

4. यदि प्रतिवादी 2 और 3 ने असम सरकार के पुलिस अधिकारियों के रूप में असम सरकार के निर्देशों पर कार्रवाई की और दि. 1.10.77 को भी नियंत्रण आदेश लागू करने के लिए आगे बढ़े, उन्हें उचित या संभावित कारण के बिना कार्य करना नहीं कहा जा सकता है। सवाल यह नहीं है कि क्या वादी को अंततः दोषी पाया गया था, लेकिन सवाल यह है कि क्या अभियोजक ने ईमानदारी से काम किया और माना कि वादी दोषी था। [352-सी-ई]

ए.डी.एम. जबलपुर बनाम शिवकांत शुक्ला, [1976] 2 एस.सी.सी. 521 (579) और ग्लिंस्की बनाम मैक आइवर [1962] ए.सी. 726 (766), संदर्भित।

'टॉर्ट' पर विनफील्ड और जोलोरीज़ का उल्लेख किया गया है।

5. उच्च न्यायालय का यह निष्कर्ष गलत है कि उचित और संभावित कारण की अनुपस्थिति थी, क्योंकि केंद्र सरकार की अधिसूचना के

मद्देनजर कार्रवाई अनधिकृत या अवैध थी। अवैधता अपने आप में इस तरह के निष्कर्ष की ओर नहीं ले जाती है। [352 - जी]

6. अपीलार्थी के मामले में कोई सच्चाई नहीं है कि जब्ती के समय, उन्होंने प्रतिवादी 2 और 3 को राजपत्र अधिसूचना के बारे में सूचित किया। इस पहलू के लिए कोई अभिवचन नहीं है कि अपीलार्थी और मालिक ने प्रतिवादी 2 और 3 को परमिट दिखाया। जब दूसरे प्रतिवादी से जिरह की गई तो कोई सवाल नहीं किया गया। तीसरे प्रतिवादी से पूछा गया और उसने सुझाव को अस्वीकार कर दिया। इसलिए, परमिट दिखाने वाली याचिका को उचित रूप से प्रमाणित नहीं किया गया है। [352 - एच]

7. ट्रायल कोर्ट द्वारा चावल के एक थैले की मांग के संबंध में अपीलार्थी और उनके मुनिम की साक्ष्य पर सही ही अविश्वास किया गया था। आपराधिक मामले में अपीलार्थी द्वारा ऐसा कोई मामला सामने नहीं रखा गया था। [353 - सी]

8. उच्च न्यायालय का दृष्टिकोण कि उत्तरदाता 2 और 3 ने लिखित कथन को व्यक्तिगत रूप से हस्ताक्षरित नहीं किया एक बार जब विवाद्यक तय किए गए और दोनों पक्षों द्वारा साक्ष्य पेश किया गया बहुत तकनीकी प्रतीत होता है। उच्च न्यायालय द्वारा "शक्तियों का दुरुपयोग" या

"अत्याचारी" आदि शब्दों के उपयोग के लिए प्रमाणिक नहीं ठहराया गया है। [353 - सी]

9. द्वेष या उचित और संभावित कारण की अनुपस्थिति के संबंध में उच्च न्यायालय के निष्कर्ष को इस तथ्य के बावजूद कि इस तरह का निष्कर्ष बी एंड सी अनुसूचियों में आर्थिक नुकसान को दिलाए जाने का आधार था, स्वीकार नहीं किया जा सकता है जो डिक्री अंतिम हो गई है। यदि ऐसा है, तो प्रत्यर्थी 'क' अनुसूची में गैर-आर्थिक नुकसान के संबंध में मुकदमे को निरंतर जारी रख सकता है। [353-डी]

10. वादी द्वारा ए अनुसूची में गैर-आर्थिक नुकसान के संबंध में हर्जाने की मांग के लिए दायर की गई अपील को खारिज कर दिया जाता है और उक्त 'क' अनुसूची के संबंध में पहली अपील को खारिज करना दर्द या प्रतिष्ठा की हानि आदि के कारण हुए नुकसान के प्रमाण के प्रश्न में गए बिना कायम रखा जाता है। बी और सी अनुसूची मदों में आर्थिक नुकसान के लिए डिक्री बनी हुई है। [353-एफ]

सिविल अपीलीय न्यायनिर्णयः सिविल अपील सं. 6036/1990.

गुवाहाटी उच्च न्यायालय एफ.ए.सं. 89/1984 के निर्णय और आदेश में दिनांक 22.5.90 से पारित।

एन.आर. चौधरी अपीलार्थी के लिए

एम/एस जैन हंसारिया और कं. के लिए विजय हंसारिया, सुनील के. जैन और एस. बोरठाकुर, उत्तरदाता संख्या 1 के लिए।

प्रतिवादी संख्या 2 के लिए एस. आर. हेगड़े, (एन. पी.)

न्यायालय का निर्णय एम. जगन्नाथ राव, जे. द्वारा दिया गया था

अपीलार्थी शीर्षक मुक़दमे 1978 का सं. 40, सहायक जिला न्यायाधीश, जोरहाट में वादी था। उन्होंने तीन प्रतिवादियों, असम राज्य और दो पुलिस अधिकारियों के खिलाफ अनुसूचि ए, बी और सी में दिखाई गई विभिन्न राशियों की वसूली के लिए दुर्भावनापूर्ण अभियोजन के लिए हर्जाने के लिए मुकदमा दायर किया। वाद की अनुसूची ए रु. 2,53,425 की राशि मानसिक पीड़ा, सामाजिक और सार्वजनिक अपमान, गलत कारावास और आपराधिक मामलों का बचाव करने के लिए किए गए खर्च के प्रति नुकसान के रूप में किया गया। (सुविधा के लिए हम उन्हें गैर-आर्थिक नुकसान के रूप में वर्णित करेंगे)। अनुसूचीं बी और सी में अपीलार्थी के धान और चावल का मूल्य शामिल था जिसे जब्त किया गया था और फिर पुलिस अधिकारियों, प्रतिवादी 2 और 3 द्वारा फिर बेचा गया (सुविधा के लिए हम उन्हें आर्थिक नुकसान के रूप में वर्णित करेंगे)। निचली अदालत ने दि. 16.7.84 को मुकदमा खारिज कर दिया, लेकिन अपील पर, उच्च न्यायालय ने यह अभिनिर्धारित करते हुए कि प्रतिवादी 1 लगायत 3

दुर्भावनापूर्ण अभियोजन, शक्ति के दुरुपयोग और अनधिकृत कार्यवाही के दोषी थे, केवल बी और सी अनुसूचियों (माल का मूल्य) में आर्थिक क्षति के संबंध में राहत दी, लेकिन अनुसूचि ए में (दर्द, प्रतिष्ठा को नुकसान आदि) गैर-आर्थिक नुकसान के लिए मुकदमा खारिज कर दिया इस आधार पर कि उक्त मदों के संबंध में अभिवचन और साक्ष्य अस्पष्ट थे। वादी ने ए अनुसूची द्वारा कवर किए गए गैर-आर्थिक नुकसान के लिए यह अपील दायर की है। प्रतिवादी 1 से 3 ने बी या सी अनुसूचियों के अनुसार आर्थिक नुकसान के लिए आदेशित राशि के संबंध में कोई अपील दायर नहीं की है।

संक्षेप में तथ्य इस प्रकार हैंः-

प्रतिवादी 2 और 3 ने दि. 1.10.1977 को शाम के समय अपीलार्थी की मिल में प्रवेश किया और धान और चावल जब्त कर लिए और असम खाद्यान्न (लाइसेंस और नियंत्रण) आदेश, 1961 के प्रावधानों के कथित उल्लंघन के लिए अपीलार्थी को गिरफ्तार कर लिया। याचिकाकर्ता के खिलाफ आपराधिक मामला दर्ज किया गया था। दि. 4.10.1977 को अपीलार्थी को जमानत दे दी गई थी लेकिन उसे केवल दि. 5.10.1977 पर रिहा किया गया था। धान और चावल बेच दिए गए और रु. 44,592.10 वसूले गए। यह राशि बी और सी अनुसूचियों में दिखाई गई है। अपीलार्थी को आपराधिक न्यायालय द्वारा दि. 12.4.78 को इन आधारों पर उन्मोचित

कर दिया गया था कि आसाम नियंत्रण आदेश 1961 खोज, जब्ती और गिरफ्तारी के समय दिनांक 1.10.1977 को लागू नहीं था। लेकिन यह कि यह दि. 30.9.1977 पर समाप्त हो गया था।

अपीलार्थी ने निचली अदालतों में तर्क दिया कि तलाशी, जब्ती और गिरफ्तारी अनधिकृत थी क्योंकि वास्तव में केंद्र सरकार ने दिनांक 1.10.1977 से विभिन्न प्रतिबंध हटा दिये थे और उस ओर से समाचार विभिन्न समाचार पत्रों में दि. 29.9.1977 पर प्रकाशित किया गया था। उन्होंने यह भी तर्क दिया कि उन्होंने नियंत्रण आदेश की समाप्ति के बारे में तलाशी अभियान के समय प्रतिवादी 2,3 (प्रतिवादी 2 और 3) को व्यक्तिगत रूप से सूचित किया था कि प्रतिवादी 2 और 3 ने कोई ध्यान नहीं दिया और आगे बढ़कर अपीलार्थी को गिरफ्तार कर लिया क्योंकि उनकी चावल की बोरी की मांग का पालन नहीं किया गया था। यह भी तर्क दिया गया कि प्रतिवादी 2 और 3 ने दुर्भावनापूर्ण काम किया, कि अपीलार्थी और धान/चावल के मालिकों के पास धान मिलाने के लिए परमिट थे और उन्हें इन अधिकारियों के सामने पेश किया गया था, लेकिन उन्होंने इसकी परवाह भी नहीं की कि उन पर नजर डाले। माल की बिक्री भी जल्दबाजी में की गई।

वादी के अनुसार, यह तथ्य दर्शित करते हैं कि यह दिखाते कि अभियोजन के लिए कोई उचित या संभावित कारण नहीं था। इसलिए,

प्रतिवादी नुकसान के लिए उत्तरदायी थे, जैसा कि वाद अनुसूची ए, बी और सी में बताया गया है।

राज्य और पुलिस अधिकारियों का बचाव यह था कि दि. 1.10.1977 पर राजपत्र में केंद्र सरकार का कोई आदेश गेजेट प्रकाशित नहीं किया गया था, यह कि अपीलार्थी को भी उक्त आदेश की जानकारी नहीं थी क्योंकि यहां तक कि बाद में दायर जमानत याचिका में भी ऐसा कोई तथ्य नहीं कहा गया है कि वास्तव में, असम राज्य ने अपने अधिकारियों को दि. 30.9.97 को वायरलेस संदेश द्वारा निर्देश जारी किए थे कि केंद्र सरकार का आदेश, 1961 के असम नियंत्रण आदेश के प्रवर्तन के रास्ते में नहीं आएगा। यह तर्क दिया गया कि दि. 1.10.1977 पर की गई तलाशी, जब्ती और गिरफ्तारी की कार्रवाई दि. 30.9.77 पर जारी राज्य सरकार के इस तरह के निर्देशों के अनुसार सद्भावपूर्ण थी। धान के एक थैले की मांग को अस्वीकार कर दिया गया। यह भी कहा गया था कि अपीलार्थी या धान के मालिकों द्वारा धान की मिलिंग के लिए कोई परमिट नहीं दिखाया गया था। इसलिए अभियोजन के लिए उचित और संभावित कारण था और इसलिए मुकदमा खारिज होने योग्य था।

ट्रायल कोर्ट ने अपीलकर्ता के साक्ष्य को खारिज कर दिया और माना कि प्रतिवादियों की कार्रवाई राज्य सरकार के वायरलेस संदेश दिनांक 30.9.77 पर आधारित थी कि असम के नियंत्रण आदेश को लागू किया जा सकता

है, चावल बैग की मांग का मामला झूठा था और वह पूरा का पूरा दावा काल्पनिक था। अभियोजन के लिए उचित और संभावित कारण था। मुक़दमा ख़ारिज कर दिया गया।

अपील पर एफए 89/84 में, गौहाटी के उच्च न्यायालय ने निष्कर्षों को उलट दिया और माना कि प्रतिवादी 2 और 3 ने अपने अधिकार का उल्लंघन किया क्योंकि 1961 का असम नियंत्रण आदेश 1.10.77 को लागू नहीं था और अधिकारियों ने अपनी शक्तियों का दुरुपयोग किया। कि उक्त अधिकारियों के समक्ष अभियोजन शुरू करने के लिए उचित और संभावित कारण होने बाबत् कोई सामग्री नहीं थी। यह माना गया कि लिखित कथन श्री डी.के. बोरठाकुर, (अतिरिक्त उप. आयुक्त, शिवसागर) द्वारा हस्ताक्षर सभी प्रतिवादियों की ओर से (और प्रतिवादी 2 और 3 द्वारा नहीं) किए गए हैं। यह माना जाना चाहिए कि चावल के एक बैग की मांग के आरोप से इनकार नहीं किया गया था, कि अपीलकर्ता और धान के मालिकों ने अपने परमिट दिखाए थे, लेकिन अधिकारियों ने इस पर ध्यान नहीं दिया और प्रतिवादी 2 और 3 द्वारा अपीलकर्ता के साथ किया गया बर्ताव अत्यंत "अत्याचारी और दुर्भावनापूर्ण" था। उन निष्कर्षों पर उच्च न्यायालय ने बी और सी अनुसूचियों में आर्थिक क्षति यानी बेचे गए धान और चावल के मूल्य के लिए एक डिक्री प्रदान की। हालाँकि, उच्च न्यायालय ने ए अनुसूची, यानी मानसिक पीड़ा, प्रतिष्ठा की हानि, गलत कारावास आदि के

लिए डिक्री देने से इस आधार पर इनकार कर दिया कि अपीलकर्ता ने "अनुसूची ए में नुकसान के संबंध में कोई सबूत नहीं दिया"। वादी ने यह अपील ए अनुसूची मदों में गैर-आर्थिक क्षति के लिए दायर की है। प्रतिवादियों ने, जैसा कि पहले ही कहा गया है, बी और सी अनुसूची मदों में आर्थिक क्षति के लिए डिक्री को स्वीकार कर लिया है और बी और सी अनुसूची में आर्थिक क्षति के संबंध में कोई अपील दायर करने का विकल्प नहीं चुना है और न ही प्रतिकूल निष्कर्ष के संबंध में कोई प्रति-आपत्ति दायर की है, कि अभियोजन का कोई उचित या संभावित कारण नहीं था।

इस अपील में, प्रतिवादियों के विद्वान वकील ने हमारे सामने तर्क दिया कि अभियोजन के संबंध में उच्च न्यायालय का निष्कर्ष कि अभियोजन उचित और संभावित कारण के बिना था या यह दुर्भावनापूर्ण था आदि सही नहीं था और इसलिए ए अनुसूची में गैर-आर्थिक क्षति कोई डिक्री नहीं की जा सकती थी। दूसरी ओर, अपीलकर्ता-वादी ने तर्क दिया कि बी और सी अनुसूची में आर्थिक क्षति के लिए डिक्री एक ही निष्कर्ष पर आधारित थी और न तो बी और सी अनुसूची में आर्थिक क्षति के लिए डिक्री और न ही उचित और संभावित की अनुपस्थिति के बारे में प्रतिकूल निष्कर्ष कारण, द्वेष आदि को उत्तरदाताओं द्वारा अपील के माध्यम से या क्रॉस-आपत्ति के माध्यम से चुनौती दी गई थी और इसलिए 1976 में संशोधित आदेश 41

नियम 22 के तहत उत्तरदाताओं द्वारा उक्त निष्कर्षों पर हमला नहीं किया जा सकता थाजिन निष्कर्षों पर बी और सी अनुसूचियों में आर्थिक क्षति के लिए डिक्री आधारित थी, वे अंतिम हो गए थे और पूर्व न्याय के रूप में संचालित हुए थे। वैकल्पिक रूप से, अपीलकर्ता-वादी ने तर्क दिया कि उचित और संभावित कारण द्वेष आदि की अनुपस्थिति के बारे में निष्कर्ष उच्च न्यायालय द्वारा बताए गए पर्याप्त सबूतों पर आधारित थे और उच्च न्यायालय को गैर-आर्थिक क्षति के लिए ए अनुसूची में भी एक डिक्री पारित करनी चाहिए थी।

उपरोक्त दलीलों पर निम्नलिखित बिंदु विचारणार्थ उत्पन्न होते हैं:-

(1) क्या उत्तरदाताओं ने बी और सी अनुसूचियों में आर्थिक क्षति के संबंध में अपील या क्रॉस-आपत्ति दायर नहीं की है, उन्हें आदेश 41 नियम 22 सीपीसी (1976 में संशोधित) पर निर्भर होने और यह तर्क देने की अनुमति दी जा सकती है कि द्वेष से संबंधित व उचित और संभावित कारण की अनुपस्थिति का निष्कर्ष सही नहीं था और क्या उत्तरदाताओं को उस आधार पर, जहां तक ए अनुसूची में गैर-आर्थिक क्षति का संबंध था, उच्च न्यायालय द्वारा मुकदमे को खारिज करने का समर्थन करने की अनुमति दी जा सकती थी?

(2) क्या, यदि उत्तरदाताओं को आदेश 41 नियम 22 सीपीसी के तहत उक्त प्रतिकूल निष्कर्षों पर हमला करने का हकदार माना जाता है, तो उचित और संभावित कारण द्वेष आदि के अस्तित्व के बारे में उक्त निष्कर्षों को निरस्त किया जा सकता है?

बिंदु 1 :-

इस बिंदु के अंतर्गत, 1976 में संशोधित आदेश 41 नियम 22 सीपीसी का दायरा और प्रभाव विचार के लिए आता है। हम सबसे पहले आदेश 41 नियम 22(1) सीपीसी के संबंध में कानून की स्थिति का उल्लेख करेंगे जैसा कि 1976 के संशोधन से पहले था। इसके बाद, हम 1976 के संशोधन और उसके प्रभाव का उल्लेख करेंगे। आदेश 41 नियम 22(1), जैसा कि 1976 के संशोधन से पहले था, इस प्रकार था:

> "आदेश 41 नियम 22(1) : कोई भी प्रतिवादी, भले ही उसने डिक्री के किसी भी हिस्से से अपील न की हो, न केवल डिक्री का समर्थन कर सकता है बल्कि (यह भी कह सकता है कि) किसी भी मुद्दे के संबंध में नीचे की अदालत में उसके खिलाफ निष्कर्ष निकाला जाना चाहिए उसके पक्ष में होने के लिए, और कोई भी क्रॉस आपत्ति भी ले सकता है डिक्री पर आपत्ति जिसे वह अपील के माध्यम से ले सकता

था, बशर्ते कि उसने ऐसी आपत्ति अपीलीय न्यायालय में उसे या उसके वकील को अपील की सुनवाई के लिए निर्धारित दिन की सूचना तामील होने की तारीख से एक महीने के भीतर या (उसके भीतर दायर की हो) अपीलीय न्यायालय जितना अतिरिक्त समय देना उचित समझे, उसके भीतर दायर की हो।"

नियम दो भागों में है, पहला भाग इस बात से संबंधित है कि प्रतिवादी किसी प्रतिकूल निष्कर्ष पर हमला करके क्या कर सकता है, भले ही उसने कोई अपील या प्रति-आपत्ति दायर न की हो। दूसरा भाग इस बात से संबंधित है कि यदि प्रतिवादी प्रति-आपत्ति दाखिल करना चाहता है तो उसे क्या करना होगा।

एक बहुत ही सरल उदाहरण देने के लिए, आइए हम दुर्भावनापूर्ण अभियोजन की याचिका के इस मामले को लें जहां आर्थिक हानि (धान आदि की हानि बी एंड सी अनुसूची) के लिए क्षतिपूर्ति की मांग की जाती है और गैर-आर्थिक हानि (ए अनुसूची, दर्द, पीड़ा, प्रतिष्ठा की हानि) के लिए भी क्षतिपूर्ति की मांग की जाती है। उच्च न्यायालय ने माना कि प्रतिवादियों की ओर से द्वेष आदि था और बी और सी अनुसूचियों में आर्थिक नुकसान के लिए डिक्री दे दी, लेकिन गैर-आर्थिक नुकसान के लिए कोई डिक्री नहीं दी, क्योंकि इस संबंध में कोई उचित सबूत पेश नहीं किया

गया था। वादी ने ए अनुसूची में गैर-आर्थिक हानि के लिए डिक्री की मांग करते हुए क्षतिपूर्ति के लिए इस न्यायालय के समक्ष अपील की है। क्या उत्तरदाता-प्रतिवादी, भले ही उसने द्वेष के रूप में प्रतिकूल निष्कर्ष के संबंध में और वाद बी और सी अनुसूचियों में आर्थिक हानि के लिए डिक्री के खिलाफ कोई अपील या क्रॉस-आपत्ति दायर नहीं की है, द्वेष आदि के रूप में निष्कर्ष पर हमला कर सकता है और जहां तक (ए अनुसूची गैर-आर्थिक हानि का संबंध है) मुकदमा खारिज करने की डिक्री का समर्थन करें। हालाँकि मद्रास उच्च न्यायालय में पहले के कुछ मामलों में, यह विचार किया गया था कि ऐसी स्थितियों में उत्तरदाता-प्रतिवादी इस तरह के निष्कर्ष पर हमला नहीं कर सकता है, वेंकट राव और अन्य बनाम सत्यनारायण मूर्ति और अन्य एआईआर (1943) मद्रास 698 = आईएलआर 1944 मद्रास 147) में मद्रास उच्च न्यायालय की पूर्ण पीठ ने यह कहकर विवाद को शांत कर दिया कि प्रतिवादी उस निष्कर्ष पर हमला कर सकता है जिस पर डिक्री का एक हिस्सा उसके खिलाफ आधारित था, डिक्री के दूसरे हिस्से का समर्थन करने के उद्देश्य से जो उसके खिलाफ नहीं था। उस मामले में, लीच, सीजे ने निर्देशक न्यायाधीश वड्सवर्थ, जे. और पतंजलि शास्त्री, जे. (जैसा कि वह तब थे) के दृष्टिकोण को निम्नलिखित प्रभाव से स्वीकार किया: "आदेश 41 नियम 22 के तहत, यह प्रतिवादी-उत्तरदाताओ के लिए खुला है जिसने अपने विरुद्ध पारित आंशिक डिक्री पर

कोई प्रति-आपत्ति नहीं ली है। वादी की अपील के विरोध में एक ऐसे तर्क पर आग्रह करने के लिए जिसे यदि ट्रायल कोर्ट द्वारा स्वीकार कर लिया जाता, तो मुकदमे को पूरी तरह से खारिज करना आवश्यक हो जाता।

पूर्ण पीठ के उपरोक्त फैसले को इस न्यायालय ने चंद्रे प्रभुजी (1973)2 एससीसी 665 = एआईआर 1973 एससी 2565 के मामले में मैथ्यू, जे. द्वारा पीठ की ओर से बोलते हुए अनुमोदित किया था।

इसका मतलब है कि आदेश 41 नियम 22 सीपीसी के तहत, 1976 के संशोधन से पहले, यह प्रतिवादी-उत्तरदाताओ के लिए खुला था, जिसने वादी की अपील के विरोध में, उसके खिलाफ पारित आंशिक डिक्री पर कोई क्रॉस-आपत्ति नहीं ली थी, एक विवाद जिसे अगर ट्रायल कोर्ट ने स्वीकार कर लियाइसके परिणामस्वरूप मुक़दमा पूरी तरह ख़ारिज हो जाता।यह असंशोधित आदेश 41 नियम 22 के तहत कानूनी स्थिति थी जैसा कि वेंकट राव के मामले में मद्रास पूर्ण पीठ द्वारा स्वीकार किया गया था और जैसा कि चंद्रे प्रभुजी के मामले में इस न्यायालय द्वारा स्वीकार किया गया था।

अगला प्रश्न यह है कि क्या, जैसा कि ऊपर कहा गया है, कानून को 1976 के आदेश 41 नियम 22 के संशोधन द्वारा संशोधित किया गया है यह ध्यान दिया जाएगा कि संशोधन ने सबसे पहले आदेश 41 नियम 22

सीपीसी के मुख्य भाग में "नीचे के न्यायालय में उसके खिलाफ तय किए गए किसी भी आधार पर, लेकिन कोई भी प्रति-आपत्ति लें" शब्दों को हटा दिया है और "मुख्य भाग में यह शब्द जोड़ दिए हैं, लेकिन वह कथन भी कर सकेगा कि निचले न्यायालय में उसके विरूद्ध किसी विवाद्यक की बाबत् निर्णय उसके पक्ष में होना चाहिए था

16. आदेश 41 नियम 22(1) सीपीसी का मुख्य भाग, (1976 संशोधन के बाद) इस प्रकार है:-

> "आ. 41 नि 22(1) : कोई भी प्रत्यर्थी, भले ही उसने डिक्री के किसी भी हिस्से से अपील न की हो, न केवल डिक्री का समर्थन कर सकता है बल्कि यह भी कह सकता है कि उसके विरूद्ध किसी भी मुद्दे के संबंध में नीचे के न्यायालय में निर्णय उसके पक्ष में होना चाहिए था और डिक्री के विरूद्ध कोई ऐसी प्रति-आपत्ति भी ले सकता है जो वह, अपील के माध्यम से ले सकता था, बशर्ते कि उसने ऐसा आक्षेप अपील की सुनवाई के लिए निर्धारित दिन के नोटिस की उसे या उसके वकील को तामील की आर. के. शर्मा बनाम राज्य [एम. जगन्नाथ राव, जे.] 349 तारीख से एक महीने के भीतर, या ऐसे अतिरिक्त

समय के भीतर जो अपीलीय अदालत अनुमति देना उचित समझेगी, अपीलीय अदालत में ऐसी आपत्ति दायर की हो।"

1976 के संशोधन में आदेश 41 नियम 22 के नीचे एक स्पष्टीकरण भी जोड़ा गया है, जो इस प्रकार है:-

"स्पष्टीकरण: जिस फैसले के खिलाफ अपील की गई डिक्री आधारित है, उसमें अदालत के निष्कर्ष से व्यथित एक प्रतिवादी, इस नियम के तहत, डिक्री के संबंध में क्रॉस आपत्ति दर्ज कर सकता है, जहां तक यह उस निष्कर्ष पर आधारित है, इसके बावजूद भी कि न्यायालय किसी अन्य निष्कर्ष पर जो मुकदमे के निर्णय के लिए पर्याप्त है, डिक्री पूरी तरह या आंशिक रूप से उस प्रतिवादी के पक्ष में है।"

1976 के संशोधन के बाद आदेश 41 नियम 22, सीपीसी के संबंध में, हम सबसे पहले निशंभू जना बनाम सोवा गुहा (1982) 89 सीडब्ल्यूएन 685 3 में कलकत्ता उच्च न्यायालय के फैसले का उल्लेख कर सकते हैं। उस मामले में, मुखर्जी, जे. ने विधि आयोग की 54 वीं रिपोर्ट (पृष्ठ 295 पर) (पैरा 41.70) का हवाला देते हुए कहा कि आदेश 41 नियम 22 ने अपील में प्रत्यर्थी/उत्तरदाताओ को दो अलग-अलग अधिकार दिए हैं। पहला, किसी भी आधार पर प्रथम दृष्टया अदालत के फैसले को बरकरार रखने का

अधिकार था, जो अदालत ने उसके खिलाफ तय किया था। उस मामले में प्रतिवादी द्वारा प्रति-आपत्ति दाखिल किए बिना निष्कर्ष पर सवाल उठाया जा सकता है। विधि आयोग ने वेंकट राव के मामले में मद्रास उच्च न्यायालय की पूर्ण पीठ की सत्यता को स्वीकार किया था। आयोग ने नृसिंह प्रसाद रक्षित बनाम कमिश्नर भद्रेश्वर नगर पालिका में कलकत्ता उच्च न्यायालय के दृष्टिकोण को भी स्वीकार किया और कहा कि यदि प्रतिकूल निष्कर्ष पर हमला किया जाना था तो क्रॉस-आपत्ति पूरी तरह से अनावश्यक थी। आयोग ने पाया कि शब्द "डिक्री का समर्थन करें..." अजीब प्रतीत होता है और "इसका मतलब यह है कि वह यह कहकर इसका समर्थन कर सकता है कि उसके खिलाफ फैसला किया गया आधार उसके पक्ष में तय किया जाना चाहिए था। इसे स्पष्ट करना वांछनीय है।" यही कारण है कि आदेश 41 नियम 22 के मुख्य भाग को वेंकट राव के मामले में चंद्रे प्रभुजी के मामले में स्वीकार किए गए सिद्धांत को प्रतिबिंबित करने के लिए संशोधित किया गया था।

जहां तक स्पष्टीकरण का सवाल है, विधि आयोग ने कहा (पृष्ठ 298) कि उत्तरदाता को प्रतिकूल निष्कर्ष के खिलाफ क्रॉस-आपत्ति दर्ज करने के लिए "सशक्त" करना आवश्यक था। इसका मतलब यह होगा कि प्रति-आपत्ति दाखिल करने का अधिकार दिया गया था लेकिन प्रति-आपत्ति दाखिल करना अनिवार्य नहीं था। इसीलिए 'हो सकता है' शब्द का प्रयोग

किया गया। इसका मतलब यह था कि किसी निष्कर्ष के विरुद्ध प्रति-आपत्ति दाखिल करने का प्रावधान केवल एक सक्षम प्रावधान था।

19. विधि आयोग की ये सिफारिशें संशोधन के आपत्तियों और कारणों के विवरण में परिलक्षित होती हैं। वे इस प्रकार पढ़ते हैं:

> "नियम 22 (अर्थात जैसा कि यह 1976 से पहले था) अपील में प्रतिवादी को दो अलग-अलग अधिकार देता है। पहला, किसी भी आधार पर प्रथम दृष्टया न्यायालय की डिक्री को बरकरार रखने का अधिकार है, जिस पर अदालत ने उसके खिलाफ फैसला किया था; और दूसरा अधिकार डिक्री पर कोई भी प्रति-आपत्ति लेने का है जिसे उत्तरदाता अपील के माध्यम से ले सकता हो। पहले मामले में, प्रतिवादी डिक्री का समर्थन करता है और दूसरे मामले में, वह डिक्री पर हमला करता है। हालाँकि, नियम की भाषा में कुछ संशोधनों की आवश्यकता होती है क्योंकि कोई व्यक्ति अपने खिलाफ तय किए गए आधार पर किसी डिक्री का समर्थन नहीं कर सकता है। अभिप्राय यह है कि वह यह कहकर डिक्री का समर्थन कर सकता है कि उसके खिलाफ तय किए गए मामलों का फैसला उसके पक्ष में होना चाहिए था। इसे स्पष्ट करने के लिए नियम में संशोधन किया जा

रहा है। नियम 22 में एक स्पष्टीकरण भी जोड़ा जा रहा है जो प्रतिवादी को अपने प्रतिकूल निष्कर्ष के संबंध में क्रॉस-आपत्ति दर्ज करने का अधिकार देता है, भले ही अंतिम निर्णय पूरी तरह या आंशिक रूप से उसके पक्ष में हो।

मुकर्जी, जे. ने निशंभु जाना के मामले में देखा (देखें पृष्ठ 689) कि "संहिता के आदेश 41 के संशोधित नियम 22 कानून के स्थापित सिद्धांतों में कोई महत्वपूर्ण बदलाव नहीं लाया है" (अर्थात जैसा कि वेंकट राव के मामले में स्वीकार किया गया था) और स्पष्ट किया (पृ. 691) कि "ऐसा मानना ग़लत होगा, अब 1976 के अधिनियम 104 द्वारा डाले गए स्पष्टीकरण ने तब भी क्रॉस-आपत्तियां दाखिल करना अनिवार्य बना दिया है, जब उत्तरदाता यह कहकर डिक्री का समर्थन करता है कि किसी भी मुद्दे के संबंध में नीचे की अदालत में उसके खिलाफ निष्कर्ष उसके पक्ष में होना चाहिए था।"

तेज कुमार बनाम पुरषोत्तम एआईआर (1981) एमपी 55 में यू.एन.बचावत, जे. द्वारा समान विचार व्यक्त किया गया था कि 1976 के संशोधन के बाद, प्रतिकूल निष्कर्ष के खिलाफ क्रॉस-आपत्ति दायर करना अनिवार्य नहीं था।

स्पष्टीकरण ने उत्तरदाता को केवल प्रति-आपत्ति दाखिल करने का अधिकार दिया।

हमारे विचार में, निशंभु जेना के मामले में डिवीजन बेंच की ओर से कलकत्ता उच्च न्यायालय के मुखर्जी, जे. द्वारा व्यक्त की गई राय और मध्य प्रदेश उच्च न्यायालय में तेज कुमार के मामले में यू.एन. बच्चावत, जे. द्वारा व्यक्त की गई राय 1976 के संशोधन के बाद सही कानूनी स्थिति दर्शाती है। हमारा मानना है कि किसी अपील में उत्तरदाता-प्रतिवादी, प्रति-आपत्ति दाखिल किए बिना, एक प्रतिकूल निष्कर्ष पर हमला कर सकता है, जिस पर आंशिक रूप से प्रतिवादी के खिलाफ डिक्री पारित की गई है, डिक्री को उस हद तक बनाए रखने के उद्देश्य से, जिस हद तक निचली अदालत ने मुकदमा उत्तरदाता-प्रतिवादी के आर. के. शर्मा बनाम राज्य [एम. जगन्नाथ राव, जे.] 351 खिलाफ को खारिज कर दिया था। 1976 के संशोधन के बाद प्रति-आपत्ति दाखिल करना पूरी तरह से वैकल्पिक है और अनिवार्य नहीं है। दूसरे शब्दों में, मद्रास पूर्ण पीठ द्वारा वेंकट राव के मामले में और इस न्यायालय द्वारा चंद्रे प्रभुजी के मामले में बताए गए कानून को केवल 1976 के संशोधन द्वारा स्पष्ट किया गया है और संशोधन के बाद कानून में कोई बदलाव नहीं हुआ है।

इसलिए, हमारे समक्ष उत्तरदाता यह तर्क देने के हकदार हैं कि उचित और संभावित कारण या द्वेष की अनुपस्थिति के संबंध में उच्च न्यायालय के

निष्कर्ष - (जिस पर बी और सी अनुसूचियों में आर्थिक क्षति के लिए डिक्री आधारित थी) पर उत्तरदाताओ द्वारा ए अनुसूची के अनुसार गैर-आर्थिक क्षति के लिए डिक्री पारित करने से इनकार करने वाले उच्च न्यायालय के डिक्री को कायम रखने के प्रयोजन के लिए हमला किया जा सकता है। उत्तरदाताओं के प्रयोजन के लिए प्रतिकूल निष्कर्ष के विरुद्ध प्रति-आपत्ति दाखिल करना अनिवार्य नहीं था। कोई पूर्व न्याय नहीं है. बिंदु 1 तदनुसार उत्तरदाताओं-प्रतिवादियों के पक्ष में तय किया गया है।

बिंदु 2 :

यहां सवाल यह है कि क्या द्वेष का सबूत है और अपीलकर्ता की तलाशी, जब्ती और गिरफ्तारी और अभियोजन के लिए उचित और संभावित कारण की अनुपस्थिति का सबूत है। हमें मामले में दोनों पक्षों द्वारा पेश किए गए मौखिक और दस्तावेजी साक्ष्यों से अवगत कराया गया है। केंद्र सरकार की अधिसूचना दिनांक 30.9.77 (एन.एस.ओ. 696 (ई)), कृषि एवं सिंचाई मंत्रालय (राजपत्र भाग II-अनु.3(II)) दिनांक 30.9.77 (पृ. 2639-40 पर) इसमें कोई संदेह नहीं है कि "आवश्यक वस्तु अधिनियम, 1955 (अधिनियम 10/55) की धारा 3 द्वारा प्रदत्त शक्ति का प्रयोग करते हुए, केंद्र सरकार ने असम खाद्य अनाज (लाइसेंसिंग और नियंत्रण) आदेश, 1961 को दि. 1.10.77 से रद्द कर दिया।" यह 1.10.77 को था कि उत्तरदाताओं 2 और 3 ने तलाशी, जब्ती और गिरफ्तारी अभियान चलाया। लेकिन, जैसा

कि ट्रायल कोर्ट ने देखा, असम सरकार ने सभी डिप्टी आयुक्तों और एसडीओ को एक वायरलेस संदेश 363773 दिनांक 30.9.77 जारी किया था कि भारत सरकार की खरीद नीति दिनांक 29.9.77 में यह नहीं कहा गया है कि धान/चावल की आवाजाही पर मौजूदा प्रतिबंध 1.10.77 से वापस ले लिया गया था जैसा कि प्रेस में बताया गया है। इसके अलावा, असम खाद्यान्न (लाइसेंसिंग और नियंत्रण आदेश, 1961 को निरस्त नहीं किया गया है और नई खरीद नीति 1.11.77 से शुरू होगी। संदेश में कहा गया है:

> "...इसलिए, कृपया सुनिश्चित करें कि उपरोक्त असम खाद्य अनाज (लाइसेंसिंग और नियंत्रण) आदेश, 1961 के प्रावधान 1 अक्टूबर, 1977 के बाद भी लागू हैं, जब तक कि सरकार से अगले निर्देश न मिलें।"

रिकॉर्ड से यह भी पता चलता है कि इसकी सूचना नीचे के अधिकारियों को 3.10.77 को दी गई थी। उच्च न्यायालय द्वारा इस पहलू को उचित महत्व नहीं दिया गया।

केंद्र सरकार के फैसले के बारे में अखबार की रिपोर्टें उत्तरदाताओं के लिए 1961 के असम नियंत्रण आदेश के तहत कार्रवाई रोकने का कोई आधार नहीं हो सकती हैं। अखबार की रिपोर्टें विशेष रूप से असम नियंत्रण आदेश,

1961 का उल्लेख नहीं करती हैं। वास्तव में, जैसा कि उसके वायरलेस संदेश में कहा गया है, असम सरकार स्वयं अखबार की रिपोर्टों पर कार्रवाई करने के लिए तैयार नहीं थी। इस संबंध में अपीलकर्ता के द्वारा साक्ष्य अधिनियम की धारा 81 पर भरोसा किया गया था, यह कहने के लिए कि समाचार पत्र की रिपोर्ट साक्ष्य थीं और उत्तरदाताओं 2 और 3 सहित सभी को आवश्यक जानकारी दी गई थी। लेकिन धारा 81 के तहत समाचार पत्रों की रिपोर्टों से जुड़ी वास्तविकता की धारणा को उसमें बताए गए तथ्यों के प्रमाण के रूप में नहीं माना जा सकता है। समाचार पत्रों में तथ्यात्मक बयान केवल सुनी-सुनाई बातें हैं, लक्ष्मी राज सेट्टी बनाम तमिलनाडु राज्य (1988) 3 एससीसी 319 अब यदि प्रतिवादी 2 और 3 ने असम सरकार के पुलिस अधिकारियों के रूप में असम सरकार के निर्देशों पर काम किया और 1.10.77 को भी नियंत्रण आदेश लागू करने के लिए आगे बढ़े, तो हमारी राय में, उन्हें उचित या संभावित कारण के बिना किया गया कार्य नहीं किया जा सकता है। झूठे कारावास की क्षतिपूर्ति के लिए मुकदमे का उपाय हमारे देश में टॉर्ट्स के कानून का हिस्सा है (ए.डी.एम. जबलपुर बनाम शिवाकांत शुक्ला (1976) 2 एससीसी 521 (at 579) ग्लिंस्की बनाम माइवर (1962) ए.सी. 726, 766 पर लॉर्ड डेवलिन ने कहा:

> "प्रतिवादी वास्तविक तथ्यों पर नहीं बल्कि उन लोगों का न्यायाधीश तथ्यों पर निर्णित होने का दावा कर सकता है

जिन पर वह ईमानदारी से, भले ही गलती से भी विश्वास करता हो; यदि वह कल्पना पर ईमानदारी से काम करता है, तो वह उस पर निर्णित किए जाने का दावा कर सकता है।"

सवाल यह नहीं है कि क्या वादी अंततः दोषी पाया गया, बल्कि सवाल यह है कि क्या अभियोजक ने ईमानदारी से काम किया और माना कि वादी दोषी था। जैसा कि पुलिस अधिकारियों द्वारा शुरू किए गए अभियोजन में, टॉर्ट पर विनफील्ड और जोलोविज़ द्वारा बताया गया है (15 वां संस्करण, 1998, पृष्ठ 685), यह तथ्य कि उन्होंने वरिष्ठ अधिकारियों की सलाह या निर्देश पर ऐसा किया, प्रासंगिक तथ्यों में से एक है जब तक कि यह साबित न हो जाए कि वह विशेष पुलिस अधिकारी ने स्वयं ईमानदारी से विश्वास नहीं करें कि वादी किसी अपराध का दोषी था।

हमारी राय में, उच्च न्यायालय का यह निष्कर्ष निकालना गलत था कि उचित और संभावित कारण का अभाव था क्योंकि केंद्र सरकार की अधिसूचना के मद्देनजर कार्रवाई अनधिकृत या अवैध थी। अवैधता अपने आप में ऐसे निष्कर्ष तक नहीं पहुंचती। इसके अलावा अपीलकर्ता के मामले में कोई सच्चाई नहीं है कि 1.10.1977 को जब्ती के समय, उसने प्रतिवादी 2 और 3 को राजपत्र अधिसूचना के बारे में सूचित किया था। मुद्दा यह है कि गिरफ्तारी के बाद आर. के. शर्मा बनाम राज्य [एम. जगन्नाथ राव,

जे.] 353 दायर जमानत याचिका में भी ऐसा दावा नहीं किया गया था। इस तर्क के संबंध में कि अपीलकर्ता और धान के मालिकों ने प्रतिवादी 2 और 3 को परमिट दिखाया, हमें इस पहलू पर पर्याप्त दलील नहीं मिली। किसी भी मामले में हमने पाया कि जब दूसरे प्रतिवादी से जिरह की गई तो कोई सवाल नहीं उठाया गया। जैसा कि साक्ष्य अधिनियम की धारा 138 के संदर्भ में सरकार ऑन एविडेंस (15 वां संस्करण, 1999, खंड 2, पृष्ठ 2179) द्वारा बताया गया है।

> "आम तौर पर, जिरह करते समय, एक पक्ष के वकील को अपने प्रत्येक प्रतिद्वंद्वी के गवाहों को, बदले में, अपने स्वयं के मामले के बारे में उतना ही बताना चाहिए जितना उस विशेष गवाह से संबंधित है या जिसमें उसकी हिस्सेदारी थी।"

तीसरे प्रतिवादी से पूछा गया और उसने सुझाव से इनकार कर दिया। इसलिए, परमिट दिखाने वाली याचिका उचित रूप से प्रमाणित नहीं की गई है। दूसरा आरोप यह है कि प्रतिवादी 2 और 3 ने मिल में प्रवेश किया और चावल की एक बोरी की मांग की। हमारा विचार है कि ट्रायल कोर्ट द्वारा अपीलकर्ता और उसके मुनीम के साक्ष्य पर सही विश्वास नहीं किया गया। आपराधिक मामले में अपीलकर्ता द्वारा ऐसा कोई मामला सामने नहीं रखा गया था। उच्च न्यायालय का यह विचार कि उत्तरदाताओं 2 और 3 ने

लिखित बयान पर व्यक्तिगत रूप से हस्ताक्षर नहीं किए हैं, एक बार विवाद्यक तय हो जाने और दोनों पक्षों द्वारा साक्ष्य प्रस्तुत किए जाने के बाद बहुत अधिक तकनीकी प्रतीत होता है। हमें उच्च न्यायालय द्वारा "शक्तियों का दुरुपयोग" या "अत्याचारी" आदि शब्दों के उपयोग के लिए कोई वारंट भी नहीं मिला।

उपरोक्त कारणों से, हमारा विचार है कि द्वेष या उचित और संभावित कारण की अनुपस्थिति के संबंध में उच्च न्यायालय के निष्कर्ष को स्वीकार नहीं किया जा सकता है, इस तथ्य के बावजूद कि ऐसा निष्कर्ष बी और सी अनुसूचियों में आर्थिक क्षति देने का आधार था जो डिक्री अंतिम बन गई। यदि ऐसा है, तो उत्तरदाता ए अनुसूची में गैर-आर्थिक क्षति के संबंध में मुकदमे को निरंतर रख सकते हैं। हम बिंदु 2 पर प्रतिवादियों के पक्ष में और वादी अपीलकर्ता के विरुद्ध हैं।

उपरोक्त कारणों से, वादी द्वारा ए अनुसूची में गैर-आर्थिक क्षति के संबंध में क्षतिपूर्ति की मांग करने वाली अपील खारिज कर दी गई है और उक्त ए अनुसूची के संबंध में पहली अपील को खारिज करने का आदेश कष्ट या प्रतिष्ठा की हानि आदि के लिए देय क्षति के प्रमाण के प्रश्न में जाने के बिना बरकरार रखा गया है। बी और सी अनुसूची मदों में आर्थिक हानि के लिए डिक्री बनी हुई है। तदनुसार, अपील खारिज की जाती है, लेकिन बिना किसी लागत के।

अपील खारिज

यह अनुवाद आर्टिफिशल इंटेलिजेन्स टूल सुवास की सहायता से अनुवादक न्यायिक अधिकारी आराधना शर्मा (आर.जे.एस) द्वारा किया गया है।

अस्वीकरण यह निर्णय पक्षकार को उसकी भाषा में अनुवादित किया गया है और किसी अन्य उद्देश्य के लिए इसका उपयोग नहीं किया जा सकता है। सभी व्यावहारिक और आधिकारिक उद्देश्यों के लिए , निर्णय का अंग्रेजी संस्करण ही प्रमाणिक होगा और निष्पादन और कार्यान्वयन के उद्देश्य से भी अंग्रेजी संस्करण ही मान्य होगा |